

राजस्थान उच्च न्यायालय

जयपुर बेंच

एस.बी सिविल रिट याचिका संख्या 280/1991

कैलाश पुत्र श्री रतन, निवासी किशनपुरा थाना रावांजना दुगर

----अपीलकर्ता

बनाम

राजस्थान राज्य

----प्रतिवादी

अपीलकर्ता(ओं) के लिए	:	श्री विष्णु बोहरा, अधिवक्ता
प्रतिवादी(ओं) के लिए	:	श्री इमरान खान, पीपी

माननीय श्री जस्टिस अनूप कुमार ढांड

निर्णय

आरक्षित किया गया : 21/05/2024

उच्चारित किया गया : 30/05/2024

रिपोर्टेबल

सुविधा की दृष्टि से, इस निर्णय को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया गया है:-

अनुक्रमणिका

(1) तथ्यात्मक प्रस्थिति.....
.....3

(2) अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुतियाँ

.....4

(3) लोक अभियोजक द्वारा

प्रस्तुतियाँ.....5

(4) विश्लेषण एवं चर्चा.....

.....5

(क) क्या अपील की अवस्था में किशोरावस्था की दलील ली जा सकती है.....6

(ख) अपीलार्थी की आयु निर्धारित करने हेतु जांच के

निर्देश.....10

(ग) क्या जुवेनाइल /अपीलार्थी पर दंड एवं सजा लगाई जा सकती है.....11

(घ) जुवेनाइल की सजा संबंधी कई निर्णयों पर कानूनी विश्लेषण.....13

(5)

निष्कर्ष.....

.....18

1. “जुवेनाइल” शब्द लैटिन शब्द “जुवेनिलिस” से उत्पन्न हुआ है। इसका अर्थ है कोई ऐसा व्यक्ति जो युवा एवं अपरिपक्व हो। इसे विकास के प्रारंभिक चरण, युवावस्था या परिपक्वता की कमी के रूप में भी संदर्भित किया जा सकता है। एक जुवेनाइल वह बच्चा होता है जिसने वह उम्र पार नहीं की है, जिस पर उसे अपनी आपराधिक गतिविधियों के लिए उसी तरह से उत्तरदायी ठहराया जा सके जैसे एक वयस्क को

ठहराया जाता है। जब किसी युवा अपराधी की बात की जाती है तो “जुवेनाइल” शब्द का प्रयोग किया जाता है। परिणामस्वरूप, जुवेनाइल वह बच्चा होता है जिस पर कुछ ऐसे कार्य या चूक करने का आरोप हो, जो अवैध हों और जिन्हें दंड विधियों द्वारा उसी रूप में वर्गीकृत किया गया हो।

2. हमारे देश में, बाल अपराध को जुवेनाइल अपराध के रूप में वर्गीकृत किया जाता है, अर्थात् निर्धारित आयु से कम बच्चों द्वारा किए गए आपराधिक कृत्यों को बाल अपराध के रूप में माना जाता है।

3. क्या कोई भी जुवेनाइल, जिसकी उम्र 16 वर्ष से कम है, को बड़े अपराधियों की तरह कारावास की सजा दी जा सकती है? क्या कोई बच्चा अपराधी, जिसने मुकदमे की प्रक्रिया के दौरान स्वयं को “जुवेनाइल” घोषित नहीं किया है, उसे दोषसिद्ध कर अन्य वयस्क अपराधियों के साथ कारावास की सजा भुगतने के लिए भेजा जा सकता है?

4. यहाँ प्रस्तुत मामले में अपीलकर्ता पर बलात्कार का अपराध करने का आरोप लगाया गया था और मुकदमे के बाद उसे दोषी पाया गया तथा सात वर्ष के कारावास की सजा सुनाई गई। उसने कभी यह दलील नहीं दी कि अपराध करते समय उसकी आयु 13 वर्ष से कम थी, न ही मुकदमे की प्रक्रिया के दौरान, और न ही निर्णय सुनाए जाने के समय। अब, पहली बार वह स्वयं को “जुवेनाइल” बता रहा है, जिसकी उम्र अपराध करते समय 13 वर्ष से कम थी, तथा जुवेनाइल होने का लाभ प्राप्त करना चाह रहा है, वह भी पहली बार, इस अपील की अंतिम सुनवाई के चरण पर; अर्थात् अपनी सजा और

दोषसिद्धि के 33 वर्ष बाद पृष्ठभूमि में, अब तीन दशकों से अधिक समय के अंतराल के बाद उठाए गए इस मुद्दे पर इस न्यायालय द्वारा विचार करना और निर्णय देना आवश्यक है।

तथ्यात्मक स्थिति:-

5. इस अपील में चुनौती उस विवादित निर्णय को दी गई है, जो 31.07.1991/01.08.1991 को सत्र न्यायाधीश, सवाई माधोपुर द्वारा सत्र प्रकरण संख्या 36/1990 में पारित किया गया था। इसके द्वारा अपीलकर्ता को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया गया और सात वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई ।

6. प्रासंगिक तथ्य, संक्षेप में, इस प्रकार हैं कि 06.12.1989 को पुलिस थाना रावंजन इंगर, जिला सवाई माधोपुर में एक एफ.आई.आर. (एगजी.पी-2) दर्ज की गई, जिसमें शिकायतकर्ता जगन्नाथ द्वारा अपीलकर्ता के विरुद्ध यह आरोप लगाए गए कि अपीलकर्ता ने खेत में पीड़िता 'आर' के साथ बलात्कार करने का प्रयास किया। जांच के उपरांत, अपीलकर्ता के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के तहत तथा सह-अभियुक्त श्रीमती सुंदर के विरुद्ध धारा 201 के तहत आरोप-पत्र प्रस्तुत किया गया, क्योंकि उसने घटना के पश्चात साक्ष्य नष्ट करने के उद्देश्य से पीड़िता 'आर' के वस्त्र धो डाले थे।

7. अपीलकर्ता एवं सह-अभियुक्त श्रीमती सुंदर के विरुद्ध क्रमशः आईपीसी की धारा 376 और 201 के तहत आरोप तय किए गए। दोनों ने आरोपों से इनकार किया और मुकदमा चलाने की मांग की। मुकदमे के दौरान अभियोजन पक्ष ने अपने मामले के समर्थन में कुल 9 गवाहों की जांच कराई। इसके बाद आरोपियों के बयान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत दर्ज किए गए, जिसमें उन्होंने घटना में अपनी संलिप्तता से इनकार किया और प्रस्तुत किया कि शत्रुता के कारण उन्हें इस मामले में झूठा फँसाया गया है। उनके द्वारा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया। मुकदमे की समाप्ति के बाद, सह-अभियुक्त श्रीमती सुंदर को आईपीसी की धारा 201 के तहत आरोप से बरी कर दिया गया, किंतु अपीलकर्ता को दोषी ठहराया गया और, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, विवादित निर्णय दिनांक 31.07.1991/01.08.1991 के अनुसार उसे सजा सुनाई गई।

अपीलकर्ता की ओर से प्रस्तुतियाँ:-

8. अपीलकर्ता के वकील ने कहा कि अभियोजन पक्ष 'आर' (पीडब्लू-9) द्वारा लगाए गए आरोपों के अनुसार, अपीलकर्ता ने उसके साथ बलात्कार किया। वकील ने कहा कि घटना की चश्मदीद गवाह भूली (पीडब्लू-4) ने अभियोजन पक्ष के संस्करण का समर्थन नहीं किया है और उसे पक्षद्रोही घोषित किया गया है। वकील ने कहा कि बलात्कार के आरोपों की चिकित्सा साक्ष्य से पुष्टि नहीं हुई है और इसके बाद भी, अपीलकर्ता को विद्वान ट्रायल कोर्ट ने दोषी ठहराया है। वकील ने कहा कि अपीलकर्ता की जन्मतिथि

11.11.1977 है और अपराध की तारीख 02.12.1989 है, इस प्रकार, अपीलकर्ता घटना की तारीख को किशोर था और प्रासंगिक समय पर उसकी उम्र 12 वर्ष और 21 दिन थी। अपने तर्क के समर्थन में, उन्होंने राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, खानपुर, जिला सवाई माधोपुर द्वारा जारी स्थानांतरण प्रमाण पत्र को धारा 391 सीआरपीसी के तहत एक आवेदन के साथ प्रस्तुत किया। वकील ने दलील दी कि अभियोक्ता 'आर' और उसके परिवार के सदस्यों ने भी एक दस्तावेज़ पेश किया है जिसमें यह दर्शाया गया है कि अपीलकर्ता के विरुद्ध प्राथमिकी किसी गलतफ़हमी के कारण दर्ज की गई थी और अब वे अपीलकर्ता पर मुकदमा नहीं चलाना चाहते। वकील ने दलील दी कि इन परिस्थितियों में, निचली अदालत द्वारा पारित फ़ैसले को रद्द किया जा सकता है और अपीलकर्ता को उसके खिलाफ़ लगाए गए आरोपों से बरी किया जा सकता है। वकील ने आगे दलील दी कि अगर इस अदालत का यह भी मानना है कि अभियोजन पक्ष के गवाहों द्वारा पेश किए गए सबूतों, जिनमें अभियोक्ता 'आर' के बयान भी शामिल हैं, के आधार पर अपीलकर्ता की दोषसिद्धि को रद्द नहीं किया जा सकता, तब भी अपीलकर्ता को दी गई सज़ा रद्द की जा सकती है, क्योंकि अपीलकर्ता घटना के समय किशोर था। अपने तर्क के समर्थन में, वकील ने सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **गुरप्रीत सिंह बनाम पंजाब राज्य** मामले में पारित निर्णय, **2005 (7) सुप्रीम 571**, पर भरोसा किया है। इसके विकल्प के रूप में, वकील ने तर्क दिया कि अब अपीलकर्ता की आयु 46 वर्ष से अधिक है और घटना के समय वह

किशोर था, इसलिए उसे दोषसिद्धि के बाद पहले से ही काटी गई सजा पर रिहा किया जाना चाहिए।

लोक अभियोजक द्वारा प्रस्तुतियाँ:-

9. विपरीत रूप से, लोक अभियोजक ने अपीलकर्ता के वकील द्वारा की गई प्रार्थना का विरोध किया और प्रस्तुत किया कि अपीलकर्ता के विरुद्ध बलात्कार का आरोप अभियोजन पक्ष द्वारा ठोस साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए पूरी तरह से सिद्ध कर दिया गया है। वकील ने प्रस्तुत किया कि नाबालिग होने की दलील अब इस विलंबित अवस्था में नहीं ली जा सकती, क्योंकि मुकदमे की कार्यवाही के दौरान कभी भी ऐसी कोई दलील अपीलकर्ता द्वारा नहीं ली गई थी। अतः इन परिस्थितियों में, ट्रायल कोर्ट ने अपीलकर्ता को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराने में कोई त्रुटि नहीं की है और उसे सात वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई है। वकील ने प्रस्तुत किया कि इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय का हस्तक्षेप उचित नहीं है।

विश्लेषण एवं विचार-विमर्श

10. बार में की गई प्रस्तुतियों को सुना और विचार किया तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

11. इस अपील की लंबितता के दौरान, अपीलकर्ता ने अतिरिक्त साक्ष्य लेने हेतु धारा 391 सीआरपीसी के तहत एक प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया, अर्थात् अपीलकर्ता का

स्थानांतरण प्रमाण पत्र, जो राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, खानपुर (खन्दर), जिला सवाई माधोपुर के प्रधानाचार्य द्वारा जारी किया गया है, तथा अभियुक्त 'आर' और उसके माता-पिता द्वारा प्रस्तुत समझौता आवेदन, जिसमें अपीलकर्ता को बरी किए जाने पर उन्हें कोई आपत्ति नहीं है, अर्थात् यदि इस न्यायालय द्वारा अपीलकर्ता की दोषसिद्धि और सजा को रद्द कर दिया जाता है तो उन्हें कोई आपत्ति नहीं है।

(ए) क्या अपील की अवस्था में किशोरावस्था की दलील ली जा सकती है

12. धारा 391 सीआरपीसी के तहत आवेदन प्रस्तुत करने और अपीलकर्ता के स्कूल ट्रांसफर प्रमाण पत्र पर विश्वास रखते हुए, विद्वान अधिवक्ता ने अभिलेख में यह तथ्य स्थापित करने का प्रयास किया कि कक्षा-1 के विद्यालय अभिलेख के अनुसार, अपीलकर्ता की जन्मतिथि 11.01.1977 है, जबकि घटना की तिथि 02.12.1989 है। अतः घटना के दिन अपीलकर्ता की उम्र 12 वर्ष 11 माह थी और जिस दिन कथित अपराध हुआ, वह उस दिन नाबालिग था। अतः उसे 7 वर्ष के सख्त कारावास की सजा नहीं दी जा सकती थी, भले ही वह दोषी ठहराया गया हो और धारा 376 आईपीसी के तहत दोषसिद्ध हुआ हो।

13. अब इस न्यायालय के समक्ष जो मुद्दा आता है वह यह है कि क्या अपीलकर्ता द्वारा नाबालिगता की दलील अपील के स्तर पर ली जा सकती है, विशेष रूप से तब जब वही दलील विचारण के दौरान नहीं ली गई थी और उसके विरुद्ध विचारण ऐसे किया गया, मानो वह घटना की तिथि पर वयस्क था।

14. निर्विवाद रूप से, इस अपील की लंबितता के दौरान, इस न्यायालय के समक्ष जुवेनाइल न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 (आगे 'जे जे अधिनियम, 2015' कहा गया है) लागू हुआ, जो आरोपी-अपीलकर्ता के पक्ष में घटना की तिथि पर बालक होने का दावा करने के लिए नाबालिगता की प्रार्थना पर विचार करने का व्यापक तंत्र प्रदान करता है। जे जे अधिनियम, 2015 की धारा 9(2) का प्रावधान स्पष्ट रूप से यह कहता है कि नाबालिगता की दलील किसी भी न्यायालय के समक्ष उठाई जा सकती है और इसे किसी भी स्तर पर, यहां तक कि मामले के अंतिम निस्तारण के बाद भी मान्यता दी जाएगी।

15. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अनेक निर्णय हैं, जो यह कहते हैं कि नाबालिगता की दलील, भले ही ट्रायल कोर्ट के समक्ष न उठाई गई हो, उच्च न्यायालय और माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष उठाई जा सकती है।

16. नाबालिगता के दावे का मूल्यांकन करने के मानकों को स्पष्ट करने वाली दिशानिर्देश पहली बार माननीय शीर्ष न्यायालय के समक्ष अबुजर हुसैन बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (2012) 10 एससीसी 489 के मामले में आई, और ये ही दिशानिर्देश पैरा 39, 39.1 से 39.5 में उद्धृत हैं, जिन्हें निम्नानुसार पुनरुत्पादित किया गया है:-

“39. अब, हम इस स्थिति का सार इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं:

39.1. किशोरावस्था (जुवेनाइलिटी) का दावा किसी भी स्तर पर, यहाँ तक कि मामले के अंतिम निपटारे के बाद भी, उठाया जा सकता है। यह पहली बार इस न्यायालय के समक्ष भी, साथ ही अंतिम निपटारे के बाद भी, उठाया जा सकता है। किशोरावस्था के दावे को उठाने में हुई देरी ऐसे दावे को अस्वीकार करने का आधार नहीं हो सकती। किशोरावस्था का दावा अपील में भी उठाया जा सकता है, भले ही यह ट्रायल कोर्ट के समक्ष न उठाया गया हो, और पहली बार भी इस न्यायालय के समक्ष उठाया जा सकता है, चाहे वह ट्रायल कोर्ट या अपीलीय न्यायालय में न उठाया गया हो।

39.2. सजा के बाद किशोरावस्था का दावा करने के लिए, दावा करने वाले को ऐसा कोई सामग्री प्रस्तुत करनी होगी, जिससे अदालत को प्रथम दृष्टया संतुष्ट किया जा सके कि किशोरावस्था के दावे की जांच आवश्यक है। प्रारंभिक भार उस व्यक्ति पर है जो किशोरावस्था का दावा करता है।

39.3. यह कि कौन-से दस्तावेज/सामग्री प्रथम दृष्टया न्यायालय को संतुष्ट करेंगे और/अथवा प्रारंभिक भार निर्वहन करने के लिए पर्याप्त होंगे, इसे सूचीबद्ध नहीं किया जा सकता और न ही यह निर्धारित किया जा सकता है कि किसी विशेष साक्ष्य को किस हद तक महत्व दिया जाए, जो कि नाबालिगता के अनुमान को उत्पन्न करने के लिए पर्याप्त हो सकता है, लेकिन नियम 12(3)(ए)(i) से (iii) में उल्लिखित दस्तावेज निश्चित रूप से न्यायालय की प्रथम दृष्टया संतुष्टि के लिए पर्याप्त होंगे कि अपराध के समय अभियुक्त की उम्र क्या थी, जिससे आगे नियम 12 के तहत जांच की आवश्यकता पड़े। धारा 313 के तहत रिकॉर्ड किया गया बयान बहुत अनिश्चित होता है और अपने आप में नाबालिगता के दावे को स्वीकार या अस्वीकार करने के लिए पर्याप्त नहीं होता। आमतौर पर विद्यालय त्याग प्रमाणपत्र या मतदाता सूची जैसी सामग्री की सच्चाई और/या स्वीकार्यता तथ्यों और प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर

निर्भर करेगी और कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता कि उन्हें जरूर स्वीकार या अस्वीकार ही किया जाए। अकबर शेख (2009) 7 एससीसी 415 और पवन (2009) 15 एससीसी 259 के मामलों में ये दस्तावेज प्रथम दृष्टया विश्वसनीय नहीं पाए गए, जबकि जितेन्द्र सिंह (2010) 13 एससीसी 523 के मामले में विद्यालय छोड़ने का प्रमाणपत्र, अंकतालिका और चिकित्सीय रिपोर्ट को जांच तथा आयु के सत्यापन हेतु पर्याप्त माना गया। यदि ऐसे दस्तावेज प्रथम दृष्टया न्यायालय का विश्वास अर्जित करते हैं, तो न्यायालय धारा 7-ए के अंतर्गत ऐसे दस्तावेजों के आधार पर जांच का आदेश दे सकता है ताकि अभियुक्त की उम्र निर्धारित की जा सके।

39.4. वादी, या उसके माता-पिता, या कोई भाई-बहन, या कोई रिश्तेदार द्वारा अपील या पुनरीक्षण में पहली बार या इस न्यायालय के समक्ष लंबित मामले के दौरान या मामले के निपटारे के बाद प्रस्तुत किया गया शपथपत्र, उस व्यक्ति की उम्र निर्धारित करने के लिए जांच का औचित्य सिद्ध करने में पर्याप्त नहीं होगा, जब तक कि मामले की स्थितियां इतनी स्पष्ट न हों कि वे न्यायालय के न्यायिक विवेक को अभियुक्त की उम्र की जांच का आदेश देने के लिए संतुष्ट कर दें।

39.5. वह न्यायालय जहाँ पहली बार नाबालिगता की दलील उठाई गई हो, उसे सदैव 2000 अधिनियम के उद्देश्यों से निर्देशित रहना चाहिए और इस तथ्य के प्रति सजग रहना चाहिए कि 2000 अधिनियम में निहित कल्याणकारी तथा लाभकारी उपबंधों को अत्यंत तकनीकी दृष्टिकोण से निष्प्रभावी न किया जाए तथा जो व्यक्ति 2000 अधिनियम के लाभ प्राप्त करने के हकदार हैं, उन्हें वह लाभ मिले। न्यायालयों को इस आम धारणा से अनावश्यक रूप से प्रभावित नहीं होना चाहिए कि विद्यालयों में माता-पिता/संरक्षक बच्चों की उम्र कम दर्शाते हैं।

17. विनोद कटारा बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 1204)

के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सेशंस न्यायालय को आरोपी की उम्र के संबंध में, कानून के अनुसार, जांच करने का निर्देश दिया, भले ही आरोपी की आयु 50 वर्ष से अधिक हो चुकी थी और उसकी अपील, दोषसिद्धि के विरुद्ध, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गई थी; इसमें सुप्रीम कोर्ट ने नाबालिगता की दलील के निर्धारण के पहलू को विलंबित स्तर पर भी विचार में लिया। सर्वोच्च न्यायालय ने पैराग्राफ 51 से 55 में इस स्थिति से निम्न प्रकार निपटा:—

“51. आदर्श रूप से किसी व्यक्ति की उम्र को लेकर कोई विवाद नहीं होना चाहिए, यदि जन्म कानून के अनुसार पंजीकृत किया गया हो और जन्म की वास्तविक प्रविष्टि के आधार पर स्कूल अभिलेखों में जन्मतिथि दर्ज हो। हालांकि, भारत में गरीबी, अशिक्षा, अज्ञानता, उदासीनता और व्यवस्था की अपर्याप्तता जैसी परिस्थितियां अक्सर व्यक्ति की उम्र का कोई दस्तावेजी प्रमाण न होने का कारण बनती हैं। अतः जिन मामलों में नाबालिगता की दलील काफी विलंबित अवस्था में उठाई जाती है, उनमें अक्सर दस्तावेजों की अनुपस्थिति में उम्र की निर्धारण के लिए चिकित्सा परीक्षण का सहारा लिया जाता है, जैसा कि अधिनियम 2015 की धारा 94 में दर्शाए गए दस्तावेजों के अभाव में किया जाता है। विलंबित अवस्था में नाबालिगता की दलील उठाने की छूट का नियम समकालीन बाल अधिकार न्यायशास्त्र की उस तर्कसंगतता पर आधारित है, जो बालक के सर्वोत्तम हित में सभी संबंधित पक्षों को कार्य करने की आवश्यकता बताता है।

52. कोर्ट ऑन इट्स ओन मोशन बनाम महिला एवं बाल विकास विभाग, जो 2012 एससीसी ऑनलाइन दिल्ली 2774 में प्रकाशित हुआ,

में याचिकाकर्ताओं ने यह उजागर किया कि कैसे सैकड़ों बच्चे तिहाड़ जेल में बंद थे क्योंकि पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार मेमो में वयस्क के रूप में दर्ज कर दिया था।

53. यही स्थिति उत्तर प्रदेश राज्य में भी रही, जिसके कारण इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने उपर्युक्त अनुच्छेद 6 में उल्लेखित जनहित याचिका में आदेश पारित किया।

54. बाल अधिकारों और संबंधित कर्तव्यों के बारे में जागरूकता विभिन्न अधिकारियों के बीच कम बनी रहती है। जैसे ही कोई बच्चा वयस्क आपराधिक न्याय प्रणाली के जाल में फंस जाता है, उसके लिए बिना किसी क्षति के इससे बाहर निकलना कठिन हो जाता है। कड़वा सच यह है कि यहां तक कि कानूनी सहायता कार्यक्रम भी व्यवस्था संबंधी रुकावटों में उलझे रहते हैं और अक्सर केवल कार्यवाही के काफी विलंबित चरण में ही व्यक्ति अपने अधिकारों के बारे में, जिसमें नाबालिगता के आधार पर भिन्न रूप से व्यवहार किए जाने का अधिकार भी शामिल है, जागरूक हो पाता है।

55. जो ध्यान में रखना आवश्यक है वह है किशोर न्याय अधिनियम का मुख्य उद्देश्य और उद्देश्य। इस कानून का फोकस किशोर की सुधार और पुनर्वास पर है ताकि उसे भी अन्य बच्चों की तरह आनंद लेने का अवसर मिल सके। प्रताप सिंह (सुप्रा) में, इस न्यायालय ने, किशोर न्याय अधिनियम के उद्देश्यों और मंशा को विस्तार से समझाते हुए, निम्नलिखित टिप्पणियाँ कीं:—

“... उक्त अधिनियम न केवल एक कल्याणकारी बल्कि एक उपचारात्मक कानून भी है। अधिनियम का उद्देश्य है किशोर को देखभाल, संरक्षण और पुनर्वास प्रदान करना, जिससे वह वयस्क अपराधियों के साथ तुलना किए जाने पर भी सुरक्षा पाए। संयुक्त राष्ट्र संघ के किशोर न्याय प्रशासन के लिए न्यूनतम मानक नियमों के नियम 4 को ध्यान में रखते हुए, यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि आपराधिक जिम्मेदारी के नैतिक और

मनोवैज्ञानिक घटक भी किशोर की परिभाषा के कारकों में से एक थे। अतः पहला उद्देश्य है किशोर के कल्याण को बढ़ावा देना और दूसरा उद्देश्य है परिस्थितियों के अनुपात के सिद्धांत को लागू करना, जिससे अपराधी और पीड़ित—दोनों की परिस्थितियों और अपराध की प्रतिक्रिया में संतुलन और न्याय सुरक्षित हो...”

18. वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता ने धारा 391 सीआरपीसी के तहत, ट्रांसफर सर्टिफिकेट के आधार पर एक आवेदन प्रस्तुत किया है, जो राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, खानपुर (खन्दर), जिला सवाई माधोपुर द्वारा जारी किया गया है। इसमें यह दर्शाया गया है कि उसने कक्षा-1 में 13.01.1983 को प्रवेश लिया था, प्रवेश संख्या 290 के तहत, और विद्यालय रिकॉर्ड में दर्ज जन्म तिथि 11.01.1977 है। अतः, घटना की तिथि यानी 02.12.1989 को उसकी आयु 12 वर्ष 11 माह थी और सभी व्यावहारिक प्रयोजनों के लिए, वह घटना की तिथि पर नाबालिग था।

(बी) अपीलार्थी की आयु निर्धारित करने हेतु जांच के निर्देश :-

19. किशोर न्याय अधिनियम, 2015 के तहत विद्यमान प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय ने 04.03.2024 को उचित समझा कि सीखी सेशनस जज, सवाई माधोपुर को निर्देशित किया जाए कि वह घटना की तिथि पर अपीलकर्ता की आयु/जन्मतिथि निर्धारित करने के लिए जांच करें, जैसा कि किशोर न्याय अधिनियम, 2015 और उसके अधीन बनाए गए नियमों के अनुसार प्रक्रिया में निहित है।

20. इस न्यायालय द्वारा 04.03.2024 को जारी निर्देशों के अनुसार, सीखी सेशनस जज, सवाई माधोपुर ने अपीलकर्ता की आयु/जन्मतिथि निर्धारित करने के लिए जांच की तथा अपनी रिपोर्ट दिनांक 30.04.2024 इस न्यायालय को भेजी।

21. दिनांक 30.04.2024 की रिपोर्ट का अवलोकन करने पर, जो सेशनस जज द्वारा प्रस्तुत की गई थी, यह सामने आता है कि किशोर न्याय अधिनियम, 2015 की धारा 9(2) के तहत जांच की गई थी और अपीलकर्ता के स्कॉलर रजिस्टर एवं स्कूल रिकॉर्ड को राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, खानपुर, जिला सवाई माधोपुर से तलब किया गया था। वरिष्ठ अध्यापक श्री भूपेन्द्र कुमार सेशनस जज के समक्ष मूल रिकॉर्ड के साथ प्रस्तुत हुए, जिसमें यह दर्शाया गया कि अपीलकर्ता कैलाश चंद गुर्जर ने उक्त विद्यालय में कक्षा-1 में 13.01.1983 को 5 वर्ष 2 माह की आयु में प्रवेश लिया था और स्कूल रिकॉर्ड में उसकी जन्मतिथि 11.01.1977 अंकित थी। अपीलकर्ता ने विद्यालय में लंबे समय तक अनुपस्थिति रही, जिसके कारण उसका नाम 28.09.1984 को स्कूल रिकॉर्ड से काट दिया गया था।

22. स्कूल अभिलेख के दस्तावेजी साक्ष्य के आधार पर, घटना की तिथि अर्थात् 02.12.1989 को अपीलकर्ता की आयु 12 वर्ष 11 माह निर्धारित की गई। उपरोक्त जांच के अनुसार, अपीलकर्ता की जन्मतिथि 11.01.1977 निर्धारित की गई।

23. अतः, यह स्वतः ही स्पष्ट है कि अपीलकर्ता घटना की तिथि पर नाबालिग था और उसकी आयु 12 वर्ष 11 माह थी, जब 02.12.1989 को बलात्कार की घटना घटी।

(सी) क्या जुवेनाइल /अपीलार्थी पर दंड एवं सजा लगाई जा सकती है:-

24. इस न्यायालय के समक्ष विचारार्थ जो प्रश्न शेष रहता है वह यह है कि अब अपीलकर्ता पर कौन-सी सजा या दंड आरोपित किया जाना चाहिए?

25. वर्तमान मामले में, अपीलकर्ता की आयु घटना की तिथि पर 16 वर्ष से कम अर्थात् 12 वर्ष 11 माह थी और उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी पाया गया है और उसे सात वर्ष के कठोर कारावास की सजा दी गई है। अपीलकर्ता को विचारण के दौरान अग्रिम जमानत दी गई थी, अतः वह जांच और विचारण की प्रक्रिया के दौरान एक दिन भी न्यायिक अभिरक्षा में नहीं रहा, और पहली बार 31.07.1991 को अभिरक्षा में लिया गया जब उसे 31.07.1991/01.08.1991 के दोषसिद्धि वाले आदेश के द्वारा दंडित किया गया। इसके बाद, उसकी सजा इस न्यायालय द्वारा 22.10.1991 के आदेश से स्थगित कर दी गई। इसका अर्थ यह है कि वह 31.07.1991 से 22.10.1991 तक अर्थात् लगभग दो माह और 22 दिन जेल में रहा, यानी अपीलकर्ता ने कुल 83 दिन की सजा भुगती है।

26. उपर्युक्त तथ्यों और निष्कर्षों पर विचार करने के बाद, यह उपयुक्त होगा कि इस बिंदु पर संक्षिप्त रूप से उस न्यायिक दृष्टांत को देखा जाए कि क्या एक आरोपी को दोषसिद्धि के बाद अपील के स्तर पर, यदि वह नाबालिग/बालक सिद्ध होता है, तो उसका क्या परिणाम होता है। किशोर न्याय अधिनियम, 2015 के प्रावधानों के अनुसार, विचारण अदालत द्वारा दी गई दोषसिद्धि और सजा की स्थिति क्या होगी, और विचारण स्वयं

अधिकार क्षेत्र के अभाव में अमान्य होगी अथवा नहीं, तथा क्या केवल किशोर न्याय बोर्ड (जे.जे.बी.) ही अभियोजन द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर किए गए अपराध की जांच कर सकता है। यदि जे.जे.बी. द्वारा जांच नहीं की गई है, तो क्या संपूर्ण कार्यवाही को रद्द किया जाना आवश्यक है या केवल दंड के पक्ष पर ही किशोर न्याय अधिनियम, 2015 के अनुसार विचार करने की आवश्यकता होगी।

27. इस न्यायालय के लिए यहां यह उल्लेख करना उपयुक्त होगा कि अपीलकर्ता ने दोषसिद्धि को चुनौती देने के बजाय केवल नाबालिगता का दावा किया है और तदनुसार किशोर न्याय अधिनियम, 2015 के तहत दी गई सजा के लाभ की मांग की है।

(डी) जुवेनाइल की सजा संबंधी कई निर्णयों पर कानूनी विश्लेषण:-

28. इस विषय पर कई निर्णय हैं। कुछ में दोषसिद्धि, सजा को निरस्त कर कार्यवाही समाप्त कर दी गई है, तो कुछ में दोषसिद्धि को बरकरार रखते हुए, अभियुक्त द्वारा पहले से भुगत ली गई सजा के आधार पर उसकी रिहाई का निर्देश दिया गया है।

29. वनीत कुमार गुप्ता @ धर्मिंदर बनाम पंजाब राज्य 2009 (17) एससीसी 587 के मामले में, अभियुक्त, जिसे धारा 302 सहपठित धारा 149 आईपीसी के तहत आजीवन कारावास की सजा दी गई थी, को अपराध के समय किशोर पाया गया। सर्वोच्च न्यायालय ने यह देखते हुए कि वह कई वर्षों से जेल में है, उसकी जेल से रिहाई का निर्देश दिया।

30. भीम @ उत्तम घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, जो **2010 (14) एससीसी 571** में प्रकाशित हुआ, के मामले में, अपीलकर्ता को 5 वर्ष के कठोर कारावास की सजा दी गई थी। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष यह स्थापित हुआ कि अपराध की तिथि पर वह कानून के साथ संघर्ष में नाबालिग था और वह किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 (“2000 अधिनियम”) के लाभ का हकदार था, और उस समय तक उसकी आयु 42 वर्ष हो चुकी थी। लेकिन वह 3 वर्ष से कम अवधि के लिए जेल में था। इन परिस्थितियों में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उसे शेष अवधि के लिए जेल में नहीं रखा, बल्कि उसकी जेल से रिहाई का निर्देश दिया।

31. लखन लाल बनाम बिहार राज्य, जो **2011 (2) एससीसी 251** में प्रकाशित हुआ, के मामले में, अभियुक्त को धारा 302 सहपठित धारा 34 आईपीसी के तहत आजीवन कारावास की सजा दी गई थी, और अपराध की तिथि पर वह कानून के साथ संघर्ष में नाबालिग पाया गया था। जब उसकी अपील माननीय सर्वोच्च न्यायालय तक पहुँची, तब उसकी आयु 40 वर्ष पार कर चुकी थी। वह 7 वर्ष से अधिक समय से जेल में था। इन परिस्थितियों में, धर्मबीर बनाम स्टेट, **(2010) 2 एससीसी 344** का संदर्भ देते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने उसकी आजीवन कारावास की सजा को निरस्त कर उसकी रिहाई का निर्देश दिया।

32. राम कुमार व अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, जो **2021 एससीसी ऑनलाइन ऑल 804** में प्रकाशित हुआ, के मामले में, इलाहाबाद उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने

समान परिस्थितियों में, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों, कारावास की अवधि, अभियुक्त/अपीलकर्ता की वर्तमान आयु तथा घटना की तिथि से अब तक बीते समय को ध्यान में रखते हुए, अपीलकर्ता द्वारा दायर आपराधिक अपील आंशिक रूप से स्वीकार की और यह माना कि मामले को किशोर न्याय बोर्ड को भेजने से कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा नहीं होगा। अभियुक्त-अपीलकर्ता पहले ही तीन वर्ष से अधिक की सजा भुगत चुका है। साथ ही, घटना के दिन उसकी आयु लगभग 15 वर्ष 5 माह और 22 दिन थी। अतः, उसे इस आयु वर्ग के अन्य किशोरों के साथ किशोर विशेष गृह में नहीं रखा जा सकता। इन परिस्थितियों में, इलाहाबाद उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने सजा में संशोधन कर अपीलकर्ता को पहले से भुगती गई सजा के आधार पर रिहा कर दिया।

33. जितेन्द्र सिंह उर्फ बभू सिंह एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, रिपोर्टेड इन (2013) 11 एससीसी 193, में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि को पुष्टि दी, लेकिन चूंकि अपीलकर्ता को केवल अर्थदंड ही दिया जा सकता था, और मौजूदा ₹100/- का जुर्माना अत्यंत कम पाया गया, अतः मामला जे.जे.बी. को भेजा गया ताकि अपीलकर्ता पर लगाए जाने योग्य उचित अर्थदंड की मात्रा और पीड़ित के परिवार को दी जाने वाली क्षतिपूर्ति का निर्धारण किया जा सके।

34. महेश बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य, रिपोर्टेड इन (2018) एससीसी ऑनलाइन एससी 3655, के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि को पुष्टि दी। हालांकि, दी गई सजा को भुगती गई अवधि तक के लिए संशोधित कर दिया गया।

उपरोक्त निर्णय जितेन्द्र सिंह (सुप्रा) मामले में स्थापित विधि पर आधारित है। ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज दोषसिद्धि की वैधता/सही होने के प्रश्न को निर्धारित करने के बाद, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय के अनुच्छेद 4, 5 एवं 6 में उचित विचार किया। इसके पश्चात माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि के गुण-दोषों पर विचार करते हुए पैरा 7 में इसे बरकरार रखा। इसके बाद, रिपोर्ट के अनुच्छेद 4 से 7 का पुनरुत्पादन किया गया है:

“4. उपरोक्त तथ्यों में, हमारे समक्ष प्रस्तुत अपीलों में निर्धारण के लिए दो प्रश्न उत्पन्न होते हैं। पहला, विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज तथा उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई दोषसिद्धि की वैधता/सही होने के संबंध में है और दूसरा, यदि दोषसिद्धि को बरकरार रखा जाए तो उपयुक्त दंड/सजा की मात्रा क्या होनी चाहिए और क्या वही इस न्यायालय द्वारा दी जाए अथवा प्रकरण को किशोर न्याय बोर्ड को अधिनियम 2000 की धारा 20 के प्रावधानों के अनुसार भेज दिया जाए।

5. इस संबंध में विधि की स्थिति कुछ अस्थिर है जैसा कि जितेन्द्र सिंह उर्फ बभू सिंह एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य के मामले में इस न्यायालय द्वारा ध्यान दिया गया है, जिसमें पैराग्राफ 24 से 27 तक चार प्रकार की श्रेणियाँ चिन्हित की गई हैं जिनमें इस न्यायालय द्वारा भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण अपनाए गए। उक्त रिपोर्ट के पैरा 28 में इसका संक्षिप्त परिणाम प्रस्तुत किया गया है जिसमें पूर्ववर्ती अनुच्छेदों में की गई श्रेणीकरण का विवरण भी दिया गया है। अतः उक्त रिपोर्ट के पैरा 28 पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है जो निम्नानुसार पुनरुत्पादित है:

“28. उपरोक्त चर्चा का सार और तत्व यह है कि एक श्रेणी के मामलों में इस न्यायालय ने पाया कि किशोर ने उस अपराध को

किया है, जिसका आरोप उस पर लगाया गया था, लेकिन उसे लगभग कोई सजा नहीं मिली क्योंकि इस न्यायालय ने उसे दी गई सजा को रद्द कर दिया। दूसरी श्रेणी के मामलों में, इस न्यायालय ने केस के तथ्यों के आधार पर यह पाया कि किशोर ने जो भी अपराध किया है, उसके लिए वह हिरासत/डिटेंशन में कुछ अवधि बिताकर पर्याप्त रूप से दंडित हो चुका है। तीसरी श्रेणी के मामलों में, इस न्यायालय ने पूरे मामले को अधिकारिता वाले किशोर न्याय बोर्ड के समक्ष, किशोर की दोषरहितता या दोषसिद्धि तथा दोषसिद्ध पाए जाने पर उसे दी जाने वाली सजा दोनों के विचारार्थ भेजा है। चौथी श्रेणी के मामलों में, न्यायालय ने मामले की मेरिट पर विचार किया और यह पाते हुए कि किशोर द्वारा अपराध किया गया है, प्रकरण को अधिकारिता वाले किशोर न्याय बोर्ड को सजा तय करने के लिए भेज दिया।

6. इस घटना के संबंध में दोषसिद्धि की वैधता, जो लगभग दो दशक पहले हुई थी, हमारे सुविचारित मत में, इन अपीलों में तय की जानी चाहिए और संपूर्ण कार्यवाही, जिसमें दी गई सजा/दंड भी सम्मिलित है, सिर्फ इस आधार पर बाधित नहीं की जानी चाहिए कि अभियुक्त-अपीलकर्ता घटना की तिथि को किशोर थे। न्यायिक दृष्टिकोण हमेशा यथार्थता से जुड़ा होना चाहिए। अतः, हम ऊपर उल्लिखित चार श्रेणियों में इस न्यायालय द्वारा पूर्व में अपनाए गए एक संभावित दृष्टिकोण को अपनाते हैं, ताकि आरोपित अभियुक्तों की दोषसिद्धि की शुद्धता की जांच की जा सके, जैसा कि ऊपर आईपीसी की धाराओं के तहत उल्लेखित है।

7. इस संबंध में, अभिलेख का अवलोकन करने के पश्चात हमें कोई भी आधार नहीं मिलता कि विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा किया गया तथा उच्च न्यायालय द्वारा पुष्ट किया गया जो भी दृष्टिकोण है, उससे भिन्न कोई राय बनती है। धारा 323, 324, 325, 427, 455 सहधारा 149 आईपीसी के तहत आरोपित अभियुक्तों की दोषसिद्धि इसी प्रकार पुष्ट मानी जाएगी।”

35. सत्य देव उर्फ भूरी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, रिपोर्टेड इन (2020) 10 एससीसी 555 के मामले में, जितेन्द्र सिंह (सुप्रा) के मामले में स्थापित विधिक स्थिति का अनुसरण करते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि को बरकरार रखा और अपीलकर्ता को दी गई आजीवन कारावास की सजा को निरस्त करते हुए निर्देश दिया कि जेल प्रशासन अपीलकर्ता को सात दिन के भीतर किशोर न्याय बोर्ड (जे.जे.बी.) के समक्ष प्रस्तुत करे और उसके बाद जे.जे.बी. अपीलकर्ता की अभिरक्षा व बंदी के संबंध में उचित आदेश पारित करेगा।

36. एक और कारण है कि विचारण अदालत द्वारा किया गया ट्रायल और सत्र न्यायालय द्वारा दर्ज दोषसिद्धि कानून में अमान्य नहीं मानी जाएगी, भले ही बाद में विचारण किए गए व्यक्ति को बालक (किशोर) सिद्ध किया गया हो।

37. विधायिका की मंशा यह थी कि वह व्यक्ति, जिसे घटना की तिथि पर बालक घोषित किया गया है, को केवल उसकी सजा के हिस्से के संबंध में लाभ दिया जाए। यदि दोषसिद्धि को भी प्रभावहीन बना दिया जाता, तो न केवल किशोर न्याय अधिनियम, 2015 की धारा 9 के तहत बल्कि धारा 25 के अंतर्गत भी नियमित सत्र न्यायालय का अधिकार क्षेत्र पूरी तरह समाप्त कर दिया जाता, और यह भी प्रावधान किया जाता कि यदि विचारण के दौरान व्यक्ति को बालक माना जाता है, तो लंबित विचारण को भी जे.जे.बी. को सौंप दिया जाए और ऐसा ट्रायल शून्य व अमान्य घोषित किया जाए। इसके विपरीत, किशोर न्याय अधिनियम, 2015 की धारा 25 के तहत स्पष्ट प्रावधान है कि

किशोर न्याय अधिनियम, 2015 के प्रारंभ की तिथि पर किसी बोर्ड या न्यायालय के समक्ष लंबित कोई कार्यवाही उसी बोर्ड या न्यायालय में यथावत जारी रहेगी, जैसे यह अधिनियम लागू ही न हुआ हो। धारा 25 को आगे पुनरुत्पादित किया गया है:

“25. लंबित मामलों के संबंध में विशेष प्रावधान।

इस अधिनियम में निहित किसी भी बात के बावजूद, किसी बच्चे के कानून के विरुद्ध आचरण के संबंध में, जो किसी बोर्ड या न्यायालय के समक्ष लंबित है, उस अधिनियम के प्रारंभ होने की तिथि पर, उन सभी कार्यवाहियों को उसी बोर्ड या न्यायालय में ऐसे ही जारी रखा जाएगा जैसे कि यह अधिनियम लागू ही नहीं हुआ हो।”

38. उपरोक्त विधिक प्रावधान अर्थात् 2015 अधिनियम की धारा 9 और 2000 के अधिनियम की धारा 7 ए, जोकि जे.जे अधिनियम, 2015 की धारा 9 के समान है, को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय इस मत का है कि दोष सिद्धि के गुणों का परीक्षण किया जा सकता है और जो दोष सिद्धि दर्ज की गई है, उसे केवल इस कारण से अवैध नहीं माना जाएगा कि जांच जे.जे.बी. द्वारा नहीं की गई थी। यह केवल सजा के प्रश्न के लिए है, जिसमें जे.जे अधिनियम, 2015 के प्रावधान लागू होंगे और जो भी सजा तय की गई है, यदि वह निर्धारित सीमा से अधिक है जे.जे अधिनियम, 2015 के तहत जो अनुमन्य है, उसे जे.जे अधिनियम, 2015 के प्रावधानों के अनुसार संशोधित करना होगा। अन्यथा, वह आरोपी जिसने कोई जघन्य अपराध किया है और जिसने ट्रायल कोर्ट के समक्ष किशोरावस्था का दावा नहीं किया, वह बिना दंड के छूट जाएगा। यह भी जे.जे अधिनियम, 2015 के तहत दी गई मंशा और उद्देश्य नहीं है। जे.जे अधिनियम, 2015 के

अंतर्गत किशोर के अधिकारों और स्वतंत्रता से संबंधित उद्देश्य केवल यही है कि उसे या उसे कम सजा देकर मुख्यधारा में लाया जाए और साथ ही, किशोर के कल्याण हेतु अन्य सुविधाओं की व्यवस्था की जाए, जो कानून के साथ संघर्ष में हैं, उसके किसी भी जे.जे अधिनियम, 2015 द्वारा परिभाषित संस्थान में रहने के दौरान।

निष्कर्ष:-

39. उपरोक्त चर्चा और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा वनीत कुमार गुप्ता (सुप्रा), भीम @ उत्तम घोष (सुप्रा) तथा लखन लाल (सुप्रा) मामलों में स्थापित विधि की स्थिति के अनुसार, अपीलकर्ता की दोषसिद्धि बरकरार रखी जाती है।

40. चूंकि वर्तमान में अपीलकर्ता की आयु 46 वर्ष से अधिक है, अतः उसे जे.जे.बी या किसी अन्य बाल देखभाल सुविधा या संस्था में भेजने की आवश्यकता नहीं होगी। 31.07.1991/01.08.1991 को दिए गए विवादित निर्णय द्वारा दी गई सजा को अपीलकर्ता द्वारा पहले ही भुगती गई अवधि के अनुसार संशोधित किया जाता है। चूंकि अपीलकर्ता जमानत पर है, अतः उसे समर्पण करने की आवश्यकता नहीं है। यदि किसी अन्य मामले में आवश्यकता न हो, तो उसे उसके द्वारा पहले ही भुगती गई सजा के आधार पर रिहा किया जाएगा।

41. तदनुसार, अपील आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है।

42. सीआरपीसी की धारा 437-ए के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, अपीलकर्ता को निर्देशित किया जाता है कि वह ट्रायल कोर्ट के समक्ष ₹1,00,000/- का व्यक्तिगत बंधपत्र और ₹50,000/- की दो जमानत प्रस्तुत करे। एक माह की अवधि के भीतर, जो छह माह की अवधि के लिए प्रभावी रहेगी, जिससे यदि इस निर्णय के विरुद्ध विशेष अनुमति याचिका दायर की जाती है या अनुमति दी जाती है, तो नोटिस प्राप्त होने पर अपीलकर्ता सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत होगा।

43. ट्रायल कोर्ट का अभिलेख तत्काल वापस भेजा जाए।

44. सभी आवेदन (लंबित, यदि कोई हों) निस्तारित किए जाते हैं।

(अनूप कुमार ढांड), जे

एम आर

"अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी अधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।"



Tarun Mehra

Advocate